

बारह भावना

(पं. जयचन्दजी छाबड़ा कृत)

द्रव्य रूप करि सर्व थिर, परजय थिर है कौन ।
द्रव्यदृष्टि आपा लखो, परजय नय करि गौन ॥१॥
शुद्धातम अरु पंच गुरु, जग में सरनौ दोय ।
मोह-उदय जिय के वृथा, आन कल्पना होय ॥२॥
पर द्रव्यन तैं प्रीति जो, है संसार अबोध ।
ताको फल गति चार में, भ्रमण कह्यो श्रुत शोध ॥३॥
परमारथ तैं आत्मा, एक रूप ही जोय ।
कर्म निमित्त विकल्प घने, तिन नासे शिव होय ॥४॥
अपने-अपने सत्त्व कूँ, सर्व वस्तु विलसाय ।
ऐसे चितवै जीव तब, परतैं ममत न थाय ॥५॥
निर्मल अपनी आत्मा, देह अपावन गेह ।
जानि भव्य निज भाव को, यासों तजो सनेह ॥६॥
आतम केवल ज्ञानमय, निश्चय-दृष्टि निहार ।
सब विभाव परिणाममय, आस्रवभाव विडार ॥७॥
निजस्वरूप में लीनता, निश्चय संवर जानि ।
समिति गुप्ति संजम धरम, धरै पाप की हानि ॥८॥
संवरमय है आत्मा, पूर्व कर्म झड़ जाय ।
निजस्वरूप को पाय कर, लोक शिखर तिष्ठाय ॥९॥
लोकस्वरूप विचारि कें, आतम रूप निहारि ।
परमारथ व्यवहार गुणि, मिथ्याभाव निवारि ॥१०॥
बोधि आपका भाव है, निश्चय दुर्लभ नाहिं ।
भव में प्रापति कठिन है, यह व्यवहार कहाहिं ॥११॥
दर्श-ज्ञानमय चेतना, आतम धर्म बखानि ।
दया-क्षमादिक रतनत्रय, यामें गर्भित जानि ॥१२॥